हुसैन, इस्लाम और हिन्दुस्तान

महाराज कुमार मोहम्मद अमीर हैदर खाँ साहब महमूदाबाद

हुसैन[अ०] कौन:-

इस्लाम के पैग़म्बर, हज़रत मोहम्मद मुस्तफ़ा[स०] के छोटे नवासे और उन्हीं के दीन धर्म के अपने ज़माने में सबसे बड़े पेशवा, (अग्रणीय) जो इसी दीन की रक्षा करते हुए करबला के वन में अपने परिजनों और वफ़ादार मददगारों समेत दसवीं मोहर्रम सन् 61 हि0 को अत्यन्त निर्दयता के साथ शहीद कर दिये गये। जिनका शोक उस दिन से आज तक संसार के कोने–कोने में मनाया जाता है। मजलिसें होती हैं। आंसुओं की नदी बह निकलती है। अलम, ताज़िये, ताबूत उठाये जाते हैं। सबीलें रखी जाती हैं। मातमदार मातम करते हैं। संक्षेप में यह कि यह ग़म और शोक शताब्दियों से आयोजित होता आ रहा है और दुनिया के सभी देशों में आयोजित होता रहेगा।

इन देशों में भारत भी है जहां विशेष शान, उचित रीति और मनमोहक ढंग से हुसैन[अ०] की ताज़ियादारी की जाती है। जो अपनी आप मिसाल है।

हिन्दुस्तान क्या:-

वर्तमान भारत और पाकिस्तान (अब बंगलादेश भी) का संग्रह जो हज़ारों बरस से पुरानी संस्कृतियों और सभ्यताओं का पालन कर रहा है जिसके आसार, (अवशेष) अब भी बाक़ी हैं। और इमाम हुसैन[अ०] के ज़माने में भी थे। जहां की तलवारें अरब की भाषा में ''मुहन्नद'' और जहां की संख्या और हिसाब के प्रतीकों को ''हिन्दिसा'' कहते हैं। अगरचे यूरोप वाले गणित शास्त्र के इन प्रतीकों को अरबी संख्या कहते हैं।

इस्लाम:-

स्वयं इस्लाम यह बताता है कि ख़ुदा के नज़दीक तो बस एक ही दीन है और वह इस्लाम है। इस्लाम सच्चे विश्वासों में किसी भी अविष्कार या फेर बदल का दावेदार नहीं है। आदम से लेके ख़ातम यानी अन्तिम पैग़म्बर हज़रत मोहम्मद[स०] तक जितने पैग़म्बर दुनिया में आए सबका नज़रिया (दृष्टिकोण) एक ही था यानी 'तौहीद' और 'मआद' अर्थात् एकेश्वरवाद और हिसाब किताब के अन्तिम दिन पर ईमान, अपने पैग़म्बर की गवाही, कथनी की सच्चाई, करनी की अच्छाई, बुरी बातों की मनाही।

यही वह बुनियादी मूल्य हैं जिन्हें बुद्धि भी मानती है, जो किसी धर्म, पैग़म्बरी के दावेदार या किसी ग्रन्थ के ईश्वरकृत होने की कसौटी हैं। इसी कसौटी पर जांचने से पता चल सकता है कि किस धर्म की शिक्षाएं अपने वर्तमान स्वरूप में दुनिया वालों के हाथों विकृत हो चुकी हैं। और कितनी अपने असली रूप में बाक़ी हैं।

प्रत्येक राष्ट्र, प्रत्येक जाति और युग के लिए पैग़म्बर भेजे गये जिनकी तादाद एक लाख चौबीस हज़ार कही जाती है। और इन सब ने एक ही धर्म की शिक्षा दी और इसी दीन को ''इस्लाम'' कहते हैं। अत्याचारियों के दीन को

''इस्लाम'' कहते हैं। अत्याचारियों के दीन को इस्लाम या उनकी कार्यपद्धति को इस्लाम के अनुरूप नहीं माना जा सकता है।

हज़रत पैग़म्बर[स०] ने पैग़म्बरी के पद भार से सुसज्जित हो के यानी मबऊस होके बहय यानी ईश्वरीय संकेत का समर्थन पाके हज़रत अली[अ०] द्वारा सहायता के वचन से, खातिर जमा होके दुनिया के सामने ऐसा विधान प्रस्तुत किया कि जिसकी आधारशिला पर आज भी सभ्यता, संस्कृति, विकास और प्रगति की बड़ी बड़ी इमारतें खड़ी हैं।

यह है वह ''इस्लाम'' जिसके लिए हज़रत मोहम्मद मुस्तफ़ा[स०] ने पसीना बहाया। हज़रत अली मुर्तज़ा[अ०] मौत के मुंह पर झपट पड़े या मौत उन पर आ पड़ी और जिसके लिए हुसैन[अ०] बिन अली[अ०] ने जान–माल और औलाद सब कुरबान कर दिया।

इस्लाम किसी देश या किसी वर्ग या किसी युग के साथ बंधा नहीं है। उसकी दावत (उसका आवाहन) मनुष्य जाति के लिए आम है सामान्य रूप से है। उसके नज़दीक काले गोरे, ग़रीब–अमीर, शहज़ादे–फ़क़ीरज़ादे, मज़दूर पूँजीपति, यूरोपी अफ्रीकी, एशियाई किसी में कोई फ़र्क नहीं। इसकी गोद हर आदमी के लिए खुली हुई है और यदि ईमान है तो सबको बराबरी, बिरादरी, स्वतन्त्रता और सम्मान देने के लिए तैयार है। उसकी कुशाग्रता और समग्रता के सामने राजनैतिक सीमाएं ग़ायब हो जाती हैं। भाषा–भूषा का भेद मिट जाता है। वणिक और आर्थिक भेद–भाव लुम्त हो जाते हैं। क्यों न हो! रब–बुल–आलमीन अनेक लोगों के पोषक का बनाया हुआ विधान ऐसा ही होना चाहिए।

''कूलू लाइलाहा इल्लल्लाह तुफ्लेहू'' कहो अल्लाह के सिवा कोई ईश्वर नहीं भलाई पाओगे ''का उद्‌घोष करने वाला इन्तिज़ार कर रहा है कि जो भी ''लब्बैक'' कहकर? तत्पर्ता सूचक सकारात्मक उत्तर देके उपस्थिति हो जाए उसे अनन्तकालीन मुक्ति और सदाबहार उल्लास की राह पर लगा दिया जाए।

''दीन की पहली मन्ज़िल ईश्वर की पहचान है और पहचान की पराकाष्ठा यह है कि उसकी पुष्टि की जाए। और पुष्टि करने की कुशलता यह है कि उसको एक माना जाए। और एक मानने की पूर्णतया यह है कि उसको परिशुद्ध माना जाए। और परिशुद्ध मानने की पूर्णतया यह है कि उसकी ज़ात या अस्तित्व से अलग गुणों का इन्कार कर दिया जाए।''

इस दर्शन का बयान करने वाला पुकार के कह रहा है कि वेद–उपनिषाद के तत्व ज्ञान की गुत्थियां ''मुश्किलकुशा'' (कठिनाइयां हल करने वाले) यानी हज़रत अली[अ०] के सामने पेश करो, देखो वह दम भर में सुलझाए देते हैं।

इस्लाम ने बराबरी भी सिखाई, बिरादरी भी स्थापित की। गुलामी के अपमान को आज़ादी के सम्मान में भी बदला। लेकिन इसका अर्थ यह न लीजिए कि कोई भेद–भाव का कारण ही नहीं बचा। मतलब यह है कि भेद–भाव धन के कारण ठीक नहीं। कुटुम्ब कबीले के नाते ठीक नहीं। लेकिन विश्वास में शुद्धता, करनी में कथनी से साम्य, हराम चीज़ों से परहेज़, ईश्वर का डर जिसके मन में जितना ज़ाहिर हो उतना ही उसका सम्मान करना इस्लाम का विधान और मुसलमान का कर्तव्य है। ''तुम में सबसे अधिक सम्मानित वह है जो सबसे अधिक संयमी और ईश्वर से डरने वाला है।''

इस्लाम धर्म के अन्दरूनी निज़ाम (आन्तरिक व्यवस्था) के उसूल तो यह थे। अब ज़रा उमूरे ख़ारिजा और ग़ैर क़ौमों के साथ सम्बन्ध विदेश प्रकरण और राष्ट्रों के साथ सम्पर्क के नियम और संहताओं पर निगाह डालिए तो आप देखेंगे कि इस्लाम मुआहिदों को पूरा करने, काफ़िरों को राहे रास्त दिखाने के बाद उनके हाल पर छोड़ देने और मज़हबी आज़ादी का अलमबरदार है यानी इस्लाम क़ौलोकरार को पूरा करने, ईश्वर को न मानने वालों को सीधी राह दिखाने के बाद

उनकी दशा पर छोड़ देने और धार्मिक स्वतनत्रता का ध्वजा वाहक है।

सीरते रसूल[स०] और किरदारे अहलेबैत[अ०] जो कि तालीमाते कुरआनी के आईनादार है, यह पता देते हैं कि मन्शा–ए–तबलीग़, जब्र से कलिमा पढ़वाना कभी न था। यानी हज़रत पैग़म्बर[स०] का चरित्र और उनके पवित्र परिजनों की भूमिका जो कुर्आन की शिक्षा का दर्पण हैं, यह पता देती है कि तबलीग़ अर्थात् इस्लाम के सन्देश के प्रचार का उद्देश्य मजबूर करके कलिमा पढ़वाना नहीं था। कुरआन का इर्शाद है "दीन में किसी प्रकार की ज़बरदस्ती नहीं क्योंकि हिदायत गुमराही से (अलग) ज़ाहिर हो चुकी तो जिस शख़्स ने झूठे खुदाओं (बुतों) से इन्कार किया और खुदा ही पर ईमान लाया तो उसने वह मज़बूत रस्सी पकड़ ली है जो टूट ही नहीं सकती। और खुदा सब कुछ सुनता है और जानता है।"

सूरा–2 आयत 256

दीन जो अब्द और माबूद के दरमियान राबेत–ए–क़लबी और एक रिश्त–ए–बन्दगी है, जब्र व इकराह से कभी हासिल नहीं होता। यानी धर्म जो उपासक और उपास्य के बीच एक मानस सम्पर्क और एक दास्ता का सूत्र है। ज़ोर–ज़बरदस्ती से कभी नहीं सधता और न उसे ज़बरदस्ती मनवाना सम्भव है। जिसके अक़ायद और विश्वास हमारे अक़ायद से मुख़तलिफ़ हों (विभिन्न हों) उसके सामने सन्मार्ग और कुमार्ग का परस्पर भेद, हिदायत और गुमराही का बाहमी फ़र्क बयान कर देना हमारा फ़र्ज़ (हमारा कर्तव्य) है। फिर उसके बाद वह जाने और उसका काम। जो कोई इस पर इस तबलीग़, इस धर्मोपदेश से मुतआसिसर और प्रभावित हो जाए गोया उसने एक ऐसी मज़बूत रस्सी को खूब अच्छी तरह पकड़ लिया जो कभी टूट नहीं सकती। इस मज़बूत रस्सी को हक़ीक़त की नज़रों (सत्य दृष्टि) से देखिए तो इसके दो सिरे नज़र आएंगे जो एक दूसरे के साथ ऐसी मज़बूती से बट दिए गये हैं कि इनकी बटान कभी खुल नहीं सकती। यह दो सिरे क्या हैं?

पैग़म्बर[स०] की हदीस जवाब देगी। जब तक इस रस्सी के दोनों सिरों यानी "कुरआन" व "रसूल की इतरत", परिजनों से चिपटे रहोगे उस वक़्त तक तुम लोग कदापि गुमराह (पथ भ्रष्ट) नहीं हो सकते पैग़म्बर[स०] ने यह बातें कह के दिलनशीन करा दी (हृदयांगम करा दी) लेकिन कभी किसी को तलवार के ज़ोर से मुसलमान नहीं बनाया और न ही इसकी इजाज़त और अनुमति दी। और उनके मासूम/दोषरहित जानशीनों (उत्तराधिकारियों) का तरीक़ा भी यही था।

हाँ पैग़म्बर के बाद कुछ मुसलमानों ने "दीन–धर्म में ज़बरदस्ती नहीं" के हुक्म इम्तिनाई (निषेधज्ञा) का ध्यान नहीं रखा अरब और अजम के दरमियान भेद–भाव दुनियां संवारने की भवनाएं बराबरी के बजाए तबक़ाती इम्तियाज़ात, वर्ग की विशिष्टताएं बैत–उल–इस्लाम के कोष को कैसर और किसरा के ख़जाने के कोषागार की तरह चलाना, जागीरें बांटना बराबर बटवारे को ताक़ पर रख देना, ज़ोर ज़बरदस्ती, धोखा–धड़ी, दग़ाबाज़ी–जालसाज़ी, हराम को हलाल करना। यानी निषिद्ध को जायज़ कर देना, अनिवार्य को वर्जित कर देना और धर्मविधि को बदल देना करिश्में हैं उस गिरोह के, लीला है उस गुट की जो ज़बान से कलमा पढ़कर इस्लाम के घेरे में पहुंच गया और इक़्तिदार तसल्लुत (राजसत्ता और अधिकार) पाकर अन्दर ही अन्दर इस्लाम की जड़ों को खोखला कर डाला। इनकी मिसाल (इनका उदाहरण) एक पांचवें कालम की ऐसी है जो दोस्त बनकर दुश्मन का काम करता रहता है।

शिम्र, हुरमुला, उमर बिन साद, उबैदुल्लाह बिन ज़ियाद, यज़ीद और मुआविया इस बेदीन, अधर्मी गुट के कुछ नमूने हैं। जिसके ऐसे हज़ारों बल्कि लाखों हुए हैं। दूसरे वह जो इस्लाम की सच्ची नुमाइन्दगी (सच्चा प्रतिनिधित्व) करने वाले

इमाम हुसैन[अ०] के साथी हैं जिनके कदम राह–ए–रस्त पर (सत्य पथ पर) इस तरह जमे रहे कि तनों से सर अलग हो गये लेकिन कदम अपनी जगह से न हठे। अल्लाह के इन सदाचारी बन्दों ने अगर कोई ऐसी बात की हो जिससे इस्लाम पर तशद्दुद व खूँरेज़ी का इल्ज़ाम आ सके यानी इस्लाम पर हिंसा और रक्तपात का दोषारोपण हो सके। तो हम मान लेंगे कि इस्लाम में क़त्ल, खून, लूट–पाट और दूसरे का हक़ मारना जायज़ है। लेकिन तशद्दुद करना हिंसा फैलाना कैसे यह मुअज्जज हस्तियाँ खुद ही अपने समय के आतंकवादियों और निरंकुश शासकों के हाथों अत्याचार से पीड़ित हो के दुनिया से उठ गयी।

जज़ीरतुल अरब (अरब महाद्वीप) के बाहर इस्लाम की तबलीग़ या धर्म प्रचार

इस्लाम किसी एक देश या राष्ट्र में सीमित रहने वाला आईन और विधान नहीं। चुनान्चे जब हमारे पैग़म्बर[अ०] ने ज़ूहूर फ़रमाया यानी अपनी पैग़म्बरी की घोषणा की तो अपने पड़ोसी मुल्कों के शासकों को चिट्ठी लिख के इस्लाम स्वीकार करने का आवाहन किया। इतिहास से पता चलता है कि हब्श, मिस्र, रोम, और ईरान के शासकों को इन पत्रों द्वारा आवाहन किया गया। और इनके दरबारों में दूत भेजे गये जब यह ख़त अपनी जगह पहुंचे तो कुछ दूत कत्ल कर डाले गये। आवाहन पत्रों को असम्मान किया गया। लेकिन इस इश्तिआल, (उत्तेजना पूरक कार्यवाही) के बावजूद हिल्में मुहम्मदी हज़रत मोहम्मद[स०] की उदारता के माथे पर शिकन भी न पड़ी। व ह एक मुसलहे कुल जो रहमतु–ललिल–आलमीन, लोक परलोक के लिए दया और कृपा बना के भेजा गया था, अज़ाब और यातना का फ़रिश्ता नहीं।

इस क्रम में इतिहास से कहीं इसका पता नहीं चलता कि कोई पत्र हज़रत पैग़म्बर[स०] की तरफ़ से हिन्दुस्तान भी भेजा गया हो। आख़िर हिन्दुस्तान ने क्या कुसूर किया था। आख़िर हिन्दुस्तान भी तो क़दीम तमद्दुन आदि सभ्यता का पालना था और पैग़म्बर[स०] सकल संसार को ईश्वरीय संदेश पहुंचाने के लिए भेजे गये थे।

इस अवसर पर फिर से तारीख के पन्ने उलटिये तो पता चलेगा कि हज़रत पैग़म्बर[स०] की आंखों की ठण्डक आपके नवासे इमाम[अ०] ने स्वयं एक मौके पर हिन्दुस्तान आने की इच्छा प्रकट की थी और यह कोशिश की थी कि अपने पुनीत पितामह की नुमाइन्दगी (प्रतिनिधित्व) इस देश में करने का अवसर मिल जाए। बस इसी फ़िकरे से (इसी वाक्य से) भारतवासियों के गिले का जवाब दिया जा सकता है।

हुसैन[अ०] हिन्दुस्तान आके अपने नाना की सिफ़ारत का राजनय हक अदा करना चाहते थे।

आपको याद आई इमाम हुसैन[अ०] की हुर से बातचीत जब हुर ने इमाम[अ०] को कूफे जाने से रोका तो आपने उसके सामने क्या–क्या प्रस्ताव रखे।

इमाम[अ०]: मैं कूफे न जाऊंगा मुझे परिवार समेत इत्मीनान से मदीने लौट जाने दे।

पैग़म्बर के बेटे मैं ऐसा नहीं कर सकता। हुर ने जवाब दिया।

इमाम[अ०]: अच्छा यमन की तरफ़ चला जाने दे।

आप यमन भी न जाने पाएंगे।

इमाम[अ०]: अच्छा तो फिर मुझे हिन्दुस्तान या चीन चला जाने दे।

मैं आपकी यह बात मानने से भी मजबूर हूँ। अपने राज्यपाल उबैदुल्लाह बिन ज़ियाद के कड़े आदेशों से विवश हुर ने जवाब दिया।

हे भारतवासियों! जब इमाम हुसैन[अ०] के हालात का अध्ययन करते करते इस घटना तक पहुचो तो एक क्षण के लिए थम के इस पर गहरी नज़र डालो। इमाम हुसैन[अ०] के शब्द, उनके जीवन के ढंग और सत्य के प्रचार की भावना और जन सेवा को सोंचो और समझो तो मालूम

बाक़ी पेज नं0 27 पर..............

सब इश्क़े इलाही की मेअ्राज पर थे। यह फ़ना फ़िल्लाह अफ़राद की ज़माअत थी यह मौत के भूकों का गरोह था और शहादत के प्यासों का जर्गा ऐसे लोग जो सुब्ह से अस्र तक मैदान में जमे रहे ताकि उनकी मौत को इतिफाक़ी हादिसा न बनाया जा सके। न उनके ख़ून से ज़ालिम अपनी आस्तीन व दामन को पाक कर सके, हाँ ! हुसैन (अ0) ज़ुल्म के तमाम हथकण्डों से वाफ़िक थें करबला की चटियल रेती पर हुसैन (अ0) का ख़ून गिरा। बच्चे, बूढ़े, जवान सब के लहू से ज़मीन लालज़ार बनी मगर दरहक़ीक़त यह सारा ख़ून इस्लाम के नहीफ़ व नाज़ार जिस्म में दाख़िल होकर उसे ज़िन्दा व ताबिन्दा बना गया। इस्लाम जिसकी सूरत भी मस्ख़ हो चुकी थी इंसान की अपनी शिनाख़्त की क़सौटी बन गया और निफ़ाक़ के भंवर से उसे हमेशा के लिये रिहाई मिल गयी। हुसैनीयत अब इस्लाम की शिनाख़्त हो गयी है और यज़ीदियत कुफ़्र व निफ़ाक़ की अलामत है।

पेज नं0 34 का बक़िया...........

का चन्द्र बन गये और सदा सदा के लिये मानव-मन-मस्तिष्कको अपनी शीतलता प्रदान करते रहेंगे। यज़ीद जो धनवान था, मुकुटधारी था, राज्य सेना, प्रासाद धन-धान वाला था, गुमनामी के अंधकार में डूब कर मिट गया। गांधी हों या टैगोर,राधाकृष्णन हों या शंकराचार्य सभी के लिये हुसैन का व्यक्तित्व पूजा के योग्य है। मैं महात्मा गांधी के शब्दों में एक बार फिर महान हुसैन, सच्चे हुसैन, अहिंसा के पुजारी व बन्धुत्व के मार्ग दर्शक हुसैन को श्रद्धांजलि अर्पित करती हूँ।

''हुसैन हम भारत-वासियों के लिए स्वतंत्रता-संग्राम के सेनापति की तरह हैं, मैंने कर्बला के हीरो की जीवनी का गूढ़ अध्ययन किया है और इससे मुझको पूर्ण विश्वास हो गया है कि भारत का यदि कल्याण हो सकता है तो हमें हुसैनी उसूलों पर चलना होगा''।

पेज नं0 13 का बाक़िया...........

हो जाएगा कि सचमुच पैग़म्बर[स0] और पैग़म्बर[स0] के घराने वाले न कभी तुमको भूले ओर न तुम को कभी नज़रअन्दाज़ किया गया। इमाम हुसैन[अ0] ने तुमको भी अपने आख़िरी वक़्त में याद किया था और तुम्हारे बीच बसने की इच्छा व्यक्त की थी। विश्वास मानों अगर हुसैन[अ0] यहाँ आने पाते तो तारीख़े आलम (विश्व इतिहास) का धारा मुड़ गया होता।

हरि इच्छा, करबला के शहीद का मनोरथ क्यों कर पूरा कर रही है।

सोगवारो! हुसैन[अ0] तो करबला में तीन दिन के भूखे प्यासे शहीद कर डाले गये। आपकी लाश घोड़ों की टापों से रौंद डाली गयी।

आपका सर भाले की नोक पर दरबदर फिराया गया। लेकिन परमशक्ति को हुसैन[अ0] की बात का बड़ा पास (लिहाज़) है। देखो हुसैन[अ0] तो हिन्दुस्तान तशरीफ़ नहीं लाए मगर उनका ताज़िया हर साल आता है। दुलदुल, पैग़म्बर[स0] के कांधे पर बैठने वाले की सवारी की शान दिखाता है। अब्बास तो फ़ुरात के किनारे शाने कटा के आराम कर रहे हैं। लेकिन आज भी अब्बास[अ0] का अलम नगर–नगर गांव–गांव गश्त करता है।

क़ासिम बिन हसन[अ0] तो जवानी की नींद सो गये लेकिन उनकी मेंहदी अब भी उठायी जाती है। 6 महीने के अली असग़र[अ0] तो हुरमुला के तीर का निशाना हो गये लेकिन उनका गहवारा (उनका पालना) उनके बेज़बान और मज़लूम और पीड़ित होने का मूक प्रचारक है।

हुर के वृतान्त को ध्यान से सुनो और समझो कि हुसैन[अ0] दुश्मन को क्योंकर दोस्त, बना लेते थे। और अपने त्याग भाव और सौजन्य से कैसे मनमोह लिया करते थे।

●●●